3.5 3/8/21

* श्रीमाधवेश्वराय नमः *

ॐ श्रीतीर्थराजो जयति प्रयागः

श्री योगानन्द आश्रम

का

परिचय, नियमावली

तथा

श्रीशिवमाहिम्न



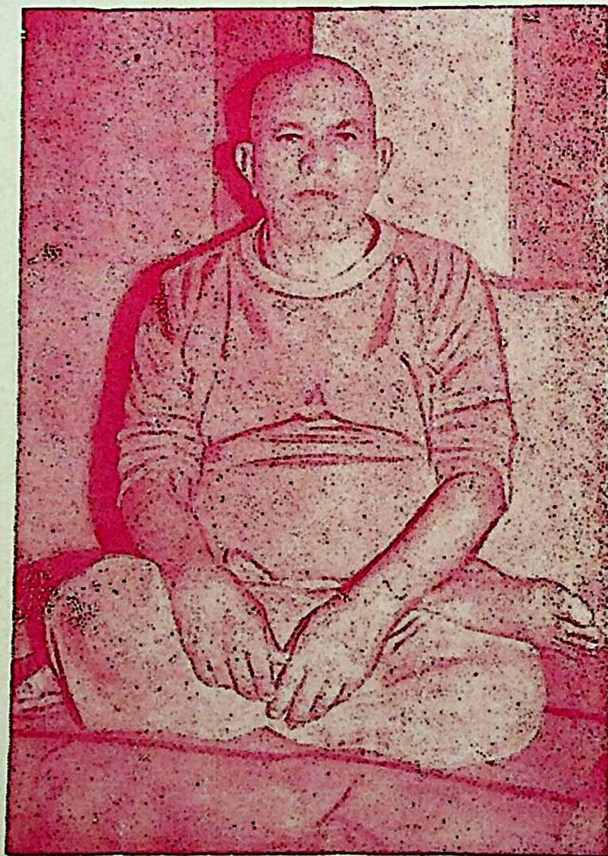
संवत् २०२७

श्रीमहन्त १०८ स्वामी चिद्घनानन्दगिरि महाराज

अध्यक्ष, श्रीयोगानन्द आश्रम, झूसी (प्रयाग)



शिवाय नौमि सत्याय अखण्डानन्ददायिने।
सच्चिदानन्दरूपाय "शिवोऽहंसागराय" च॥



त्यागमूर्ति श्री स्वामी शिवोऽहं सागर जी महाराज

श्री योगानन्द आश्रम का परिचय

उपक्रमणिका

पुण्यभूमि भारत में स्मरणातीत काल से आत्मानुसन्धान या भगवत् प्राप्ति को ही मानव जीवन का सर्वोच्च आदर्श माना गया है। श्रुति कहती है—'तमेवैकं जानथ आत्मानमन्या वाचो विमुञ्चथा-मृतस्यैष सेतुः'—अर्थात् 'हे मानवगण ! उस एकमात्र आत्मा को ही जानो, अन्य सब बातें छोड़ दो—यही अमरत्व लाभ करने का सेतु है।' इसलिये इस सर्वोच्च आदर्श की उपलब्धि के कारण जिन्होंने घर-बार, जागतिक सुख-सम्पद् सब कुछ छोड़ दिया है उनके भरण-पोषण का भार भारत की धर्मप्राण जनता ने सहर्ष अपने ऊपर ले लिया है। यही कारण है कि भारत में यत्र-तत्र साधु, महात्मा, तपस्वी एवं भक्तजनों के लिये असंख्य मठ, आश्रम, गुरुद्वारा इत्यादि पाये जाते हैं।

झूसी में स्थित 'श्रीयोगानन्द आश्रम' भी एक इसी प्रकार की प्राचीन संन्यासी-पीठ है, जहाँ की विशेषता यह है कि परिचित, अपरिचित सब साधुभक्तों को यहाँ बेरोकटोक रहने के लिये स्थान और दोनों समय भोजन दिया जाता है। इस प्राचीन तात्विक आध्यात्मिक संन्यासपीठ ने कितने संन्यासी-ब्रह्मचारी, साधु-महात्मा, भक्त-गृहस्थ आदि को सर्वोच्च जीवन बिताने की प्रेरणा दी है, उसकी गणना नहीं की जा सकती।

स्थिति

उत्तरप्रदेश में तीर्थराज प्रयाग (इलाहाबाद शहर) के पूर्व गंगाजी के उस पार झूसी ग्राम में 'श्रीयोगानन्द आश्रम' स्थित है। उत्तर पूर्व रेलवे का पुल (आईजट ब्रिज-नं० ६६) आश्रम से प्रायः लगा हुआ है और माता जाह्नवी आश्रम के बिल्कुल समीप से ही प्रवाहित होकर इस पुण्य आश्रम को और अधिक पवित्र कर रहीं हैं। वर्षा ऋतु में तो देवी भागीरथी आश्रम संलग्न होकर ही बहती हैं मानो अपार पापभार को लाघव करने के लिये साधु-महात्माओं के पुण्य स्पर्श पाने को व्याकुल हो रही हों। झूसी रेलवे स्टेशन आश्रम से करीब आधा मील दूर है। इलाहाबाद से काशी जाने का राजपथ झूसी से निकला है। परन्तु अभी तक मोटर गाड़ी आने-जाने के लिये कोई स्थायी पुल नहीं बना है। माघमेला के उपलक्ष्य में उत्तरप्रदेश सरकार की तरफ से गंगाजी के ऊपर जब कई बम्बे के पुल बन जाते हैं तब इलाहाबाद-झूसी के बीच आने-जाने में अत्यन्त सुविधा हो जाती है। नहीं तो उपर्युक्त रेल के पुल से ही पैदल या साइकिल पर जनता आया-जाया करती है। और मोटर, ट्रक इत्यादि को बहुत घूमकर 'फाफामऊ' पुल के ऊपर से आना-जाना पड़ता है।

काल

झूसी एक अत्यन्त प्राचीन ग्राम है, यहाँ तक कि पुराणों में भी राजा पुरुरुवा की राजधानी इलावर्त के रूप में इसका उल्लेख पाया जाता है। झूसी में गंगाजी के तट पर उर्वशी-कुण्ड, समुद्र-कूप इत्यादि अनेक तीर्थ है।

आज से प्रायः दो तीन सौ वर्ष पूर्व झूसी में अधिकतर जंगल ही जंगल था और अनेक साधु महात्मा यहाँ ग्राम्य संसर्ग से दूर घास-

फूस की झोपड़ियाँ बना कर रहते थे। कदाचित् इसी से इसका नाम 'फूसी' पड़ गया हो।

प्राचीन व्यक्तियों का कथन है कि अष्टादश शताब्दी के शेषांश में फूसी में तीन प्रसिद्ध महात्मा थे। श्रीयोगानन्द आश्रम के मूल प्रतिष्ठाता, श्रीमाधवानन्दजी महाराज, श्रीपरमानन्द आश्रम के मूल प्रतिष्ठाता, श्री गंगेश्वरानन्दजी महाराज, और आधुनिक वैरागी वैष्णव आश्रम के प्रतिष्ठाता, श्रीमहन्त बालमुकुन्द दास बाबाजी महाराज।

श्रीमाधवानन्दजी महाराज के काल में यह स्थान 'माधवानन्दजी की कुटिया' के नाम से प्रसिद्ध था। इस प्रकार यह ज्ञात होता है कि उत्तर-पूर्वरेलवे का पुल (आईजट ब्रिज नं० ६६) बनने के बहुत पहले से ही इस आश्रम के आदि प्रतिष्ठाता, श्रीमाधवानन्दजी महाराज यहाँ रहते थे। लगभग सन् १९०९ ई० में जब किसी विदेशी कम्पनी ने इस लौहसेतु का निर्माण किया तब श्रीमाधवानन्दजी के सुयोग्य उत्तराधिकारी श्रीयोगानन्दजी महाराज इस संन्यासपीठ की देखभाल कर रहे थे। उन्हीं के नाम से इस स्थान का नाम 'माधवानन्दजी की कुटिया' से परिवर्तित होकर 'श्रीयोगानन्द आश्रम' पड़ गया। उन्हीं के समय में इस आश्रम के अधिकतर भवनादि निर्मित हुये, जिसमें रेलवे पुल के प्रसिद्ध भारतीय ठेकेदार राय बहादुर जगमल राजा ने बहुत ही सहायता की। यहाँ तक कि आज भी उनके पुत्र श्री जयरामभाई एवं श्रीगोपालभाई आश्रम को आर्थिक सहायता देते हैं।

गुरु-परम्परा

जिस प्रकार त्रिवेणी में गंगा, यमुना और गुप्तरूप से सरस्वती सम्मिलित होकर इस धराधाम को पुनीत करती हैं उसी प्रकार इस योगानन्द आश्रम में जगद्गुरु-आदिशंकराचार्य-प्रवर्तित दशनामी

संन्यासियों की त्रिधारा गुरु-परम्परासम्मिलित होकर इस स्थल को पवित्र करती है।

आध्यात्मिक शक्ति की प्रथम धारा है श्रीमाधवानन्दजी महाराज जी की। उस में द्वितीय धारा आई-उत्तरकाशीस्थित श्री कोटेश्वर-महादेव-आश्रम के संस्थापक श्री गिरिशानन्द जी महाराज से—उन्होंने श्री माधवानन्द जी महाराज के आग्रह से अपने सुयोग्य शिष्य श्रीयोगानन्दजी को उन्हें सौंप दिया। तीसरी धारा आ मिली भड़ौच के श्रीशिवानन्दजी महाराज की ओर से, जब कि उनके शिष्य श्रीकृष्णानन्दजी महाराज को श्रीयोगानन्दजी महाराज ने बुला लिया और उन्हीं को उत्तराधिकारी बनाया। श्रीकृष्णानन्दजी महाराज ने २० जून १९६८ ई० में ब्रह्मलीन होने के पूर्व वतमान अध्यक्ष श्री चिद्घनानन्द जी महाराज को उनके दीक्षा-गुरु श्रीशिवोऽहं सागरजी महाराज की सम्मति से संन्यास देकर कृतार्थ किया। श्रीशिवोऽहं सागरजी महाराज ब्रह्मचारीरूप में श्रीयोगानन्दजी केपास ही थे और तत्पश्चात् आकरु (अहमदाबाद से कुछ दूर) के महात्मा श्री सच्चिदानन्द माधवानन्दजी महाराज के शिष्य श्रीचिदानन्द सागर जी महाराज से संन्यास लिया। वर्तमान में (१९७१ ई०) इन प्राचीन प्रतिष्ठाताओं में एकमात्र श्रीशिवोऽहं सागरजी ही जीवित हैं और वास्तव में उनकी शक्ति से ही महन्त श्रीचिद्घनानन्दजी इस प्राचीन तात्विक आध्यात्मिक संन्यासपीठ को सुचारुरूप से चलाने में सफल हो रहे हैं। श्रीशिवोऽहं सागरजी के प्रधान शिष्य श्री अखण्डानन्द सागर जी महाराज तथा ब्रह्मचारी श्रीकृष्णानन्द आदि अन्यान्य शिष्य इस आश्रम के परम हितैषी हैं और समग्ररूप से सहायता करते हैं। इन्हीं के काल में आधुनिक युग में अत्यन्त आवश्यकीय वैद्युतिक दीपमाला (इलेक्ट्रिक लाइट) का प्रबन्ध हुआ है और वृद्ध महात्माओं को गहरे कूयें से जल निकालने में जो कष्ट

होता है उसे दूर करने के लिए इलेक्ट्रिक मोटर और पाइपलाइन की व्यवस्था भी शीघ्र होने जा रही है। इससे आश्रम संलग्न भूमि में अधिक उपज भी हो सकेगी।

आश्रम-देवता

आदि प्रतिष्ठाता श्री माधवानन्दजी ने ही यहाँ श्री माधवेश्वर महादेव की प्रतिष्ठा की थी। तब से उनकी नित्य पूजा शास्त्रोक्त रीति से यथाप्रकार चलती आ रही है। श्रीगणेश, देवी, लक्ष्मी-नारायण, चण्डिका देवी, हनुमानजी आदि की मूर्त्तियाँ भी प्रतिष्ठित हैं और शालग्राम शिला में नारायण की भी नित्य पूजा होती है। यथाकाल में सरस्वती देवी की पट पूजा भी होती है। सब त्यौहार, पर्व आदि श्रद्धा-सहित मनाये जाते हैं। आश्रम में छोटी सी गौशाला भी है।

श्रीतीर्थराज-संन्यासी-संस्कृत-पाठशाला

इस आश्रम का विशेष विभाग है—'श्रीतीर्थराज-संन्यासी-संस्कृत-पाठशाला, यह सन् १९१४ ई० में स्थापित हुई थी। उत्तरप्रदेश सरकार ने इस रजिष्टरड संस्था का अनुमोदन भी किया है। यहाँ के प्रधान आचार्य की मान्यता सर्वत्र विदित है। विगत ५६ वर्ष में न जाने कितने ही विद्यार्थी इस पाठशाला से वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय की विभिन्न परीक्षा देते आये हैं और कभी-कभी मेधावी छात्र उत्तीर्ण होकर सरकारी छात्र-वृत्ति भी प्राप्त कर चुके हैं। पाठशाला का भवन आश्रम संलग्न होते हुये भी सम्पूर्ण रूप से आश्रम से पृथक् है ताकि विद्यार्थी एकान्त में पठन-पाठन कर सकें। संस्कृत पाठ के साथ साथ प्रत्येक विद्यार्थी आश्रम के पूजादि समस्त सेवाकार्य में भाग लेते हैं जिससे भारत की प्राचीन संस्कृति की छाप उनके हृदय पर उत्तम रूप से बैठ जाती है। कहना न होगा

कि सब विद्यार्थी सम्पूर्णरूपसे निःशुल्क रहते हैं और दोनों समय भोजन तो पाते ही हैं. इसके अतिरिक्त बिजली-बत्ती, पुस्तक आदि अन्यान्य सहायता भी प्राप्त करते हैं।

'मनीराम चेरिटेबिल ट्रस्ट'

इस आश्रम में दूसरा महत्वपूर्ण विभाग है 'मनीराम चेरिटेबिल ट्रस्ट'। इसकी स्थापना लाला नाथुराम जी (खत्री) के सुपुत्र श्रीमनीरामजी ने १८ जुलाई १९३२ ई० में ट्रस्ट-डीड् से की थी और इसका कार्य २५ जनवरी १९३३ से प्रारम्भ हो गया। इस ट्रस्ट से यहाँ एक अन्नक्षेत्र खोला गया और आय के अनुसार साधु महात्माओं को माधुकरी भिक्षा दी जाने लगी। श्रीमनीरामजी स्वयं इस कार्य का निरीक्षण करते थे और उन्होंने इस अन्नक्षेत्र के भंडार आदि के लिये आश्रम के नीचे तल्ले में कोठरियाँ भी बनवाईं। १ सितम्बर ११५१ में श्रीमनीराम जी के देहान्त के पश्चात् महन्त श्रीकृष्णानन्द जी इस अन्नक्षेत्र को चलाते रहे और इसके लिये पृथक् भंडार की व्यवस्था हटाकर आश्रम भंडार से ही माधुकरी देने की योजना की। तब से ऐसा ही चला आ रहा है। वर्तमान में तीन साधु इस ट्रस्ट की माधुकरी भिक्षा पा रहे हैं—इसके अतिरिक्त अन्यान्य साधु-भक्तों को आश्रम की ओर से ही माधुकरी भिक्षा दी जाती है।

उपसंहार

सर्वप्रथम आत्मोपलब्धि से अपने में शान्ति पाना एवं तत्पश्चात् सर्वत्र आत्मस्वरूप का ही विकास जानकर जीवरूपी शिव की सेवा करना ही इस आश्रम का चिरन्तन आदर्श रहा है। श्रीमाधवेश्वर महादेवजी से नियत यही प्रार्थना है कि दुर्जन सज्जन हों, सज्जन शान्तिलाभ करें, शान्तचित्त मुक्त हो जायें और मुक्त पुरुष अन्य को

मुक्त होने में सहायता करें। यहाँ सब सुखी रहें, नीरोग रहें, सब कल्याण ही देखें और कोई भी दुःखभागी न हो—

दुर्जनः सज्जनो भूयात् सज्जनः शान्तिमाप्नुयात्।
शान्तो मुच्येत बन्धेभ्यो मुक्तश्चान्यान्विमोचयेत्॥
सर्वेऽत्र सुखिनः सन्तु सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित्दुःखभाग्भवेत्॥

१४ जनवरी १६७१ —श्रीगंगानन्द
अर्द्धकुम्भावसर, मकर-संक्रान्ति

नियमावली

यद्यपि साधु महात्माओं के लिये एकमात्र आत्मचिन्तन या भगवदाराधन छोड़कर और कोई नियम नहीं लागू हो सकता, तथापि आश्रमवासी होने के कारण सबकी सुविधा और आश्रम के मंगल के लिये कुछ नियम मानकर चलना अत्यन्त आवश्यक है।

१—संध्या-आरती के समय सब साधु-महात्मा तथा विद्यार्थियों को मन्दिर में उपस्थित होना चाहिये और पाठ-भजनादि में भाग लेना चाहिये।

२—बड़ा घण्टा बजने पर यदि कोई विशेष सेवा-कार्य आ पड़े तो सब आश्रमवासियों को उसमें भरसक सहायता करनी चाहिये।

३—यदि कोई आश्रमवासी किसी समय भोजन न करे तो उसकी सूचना पहले से ही दे देनी चाहिये।

४—प्रत्येक आश्रमवासी को ध्यान रखना चाहिये कि इस तपोभूमि में दूसरे के साधन-भजन में कोई विघ्न न डालें। इसलिये जोर-जोर से बोलना, जोर से हंसना, हंसी-मजाक आदि करना सर्वथा त्याग देना चाहिये।

५—बीड़ी, सिगरेट एवं अन्यान्य नशीली वस्तुओं का सेवन सर्वथा परिवर्जनीय है।

६—आश्रम के सामूहिक कल्याण के प्रति सबकी दृष्टि रहनी चाहिये। कोई बिजली की बत्ती व्यर्थ जलती हो तो उसे बुता देना चाहिये। और भविष्य में कहीं जल का नल खुला देखें तो उसे बन्द कर देना चाहिये। आश्रम के वस्तुओं का (बाल्टी, बरतन, बिस्तरा इत्यादि) सावधानी से उपयोग करना चाहिये।

७—अपना निजी सामान, खासकर कीमती चीज जैसे कम्बल, कलम, घड़ी इत्यादि और रुपया पैसा बहुत ही होशियारी से रखना चाहिये। आश्रम में कोई भी चीज खो जाने पर आंश्रम उसके लिये कभी भी जिम्मेवार न होगा।

संध्या-आरती-भजन-क्रम

ॐ नमोऽस्त्वनन्ताय सहस्रमूर्तये
सहस्रपादाक्षिशिरोरुबाहवे ।
सहस्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते
सहस्रकोटीयुगधारिणे नमः ॥

❋ ❋ ❋

ॐ वन्दे देवमुमापतिं सुरगुरुं वन्दे जगत्कारणं,
वन्दे पन्नगभूषणं मृगधरं वन्दे पशूनां पतिम् ।
वन्दे सूर्यशशाङ्कवह्निनयनं वन्दे मुकुन्दप्रियम्,
वन्दे भक्तजनाश्रयं च वरदं वन्दे शिवं शङ्करम् ॥

❋ ❋ ❋

शान्तं पद्मासनस्थं शशिधरमुकुटं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रं,
शूलं वज्रं च खड्गं परशुमभयदं दक्षिणाङ्गे वहन्तम् ।
नागं पाशं च घण्टां डमरुकसहितं सांकुशं वामभागे,
नानालङ्कारदीप्तं स्फटिकमणिनिभं पार्वतीशं नमामि ॥

❋ ❋ ❋

कर्पूरगौरं करुणावतारं, संसारसारं भुजगेन्द्रहारम् ।
सदा वसन्तं हृदयारविन्दे, भवं भवानीसहितं नमामि ॥

❋ ❋ ❋

असितगिरि समं स्यात् कज्जलं सिन्धुपात्रे,
सुरतरुवर-शाखा लेखनी पत्रमुर्वी।
लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वकालं,
तदपि तव गुणानामीश ! पारं न याति ॥

* * *

त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम देवदेव ! ॥

* * *

करचरणकृतं वाक्कायजं कर्मजं वा,
श्रवणनयनजं वा मानसं वाऽपराधम्।
विहितमविहितं वा सर्वमेतत् क्षमस्व,
जय जय करुणाब्धे ! श्रीमहादेव !! शम्भो !!! ॥

* * *

चन्द्रोद्भासितशेखरे स्मरहरे गङ्गाधरे शङ्करे,
सर्पैर्भूषितकण्ठकर्णविवरे नेत्रोत्थवैश्वानरे।
दन्तित्वक्कृतसुन्दराम्बरधरे त्रैलोक्यसारे हरे,
मोक्षार्थं कुरु चित्तवृत्तिमचलामन्यैस्तु किं कर्मभिः १॥

* * *

पुष्पाञ्जलिः

हरिः ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्म्माणि प्रथमान्यासन ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः। ॐ राजाधिराजाय प्रसह्यसाहिने नमो वयं वैश्रवणाय कुर्महे ॥ स मे कामान् कामकामाय मह्यं कामेश्वरो वैश्रवणो ददातु ॥ कुवेराय वैश्रवणाय महाराजाय नमः ॥ ॐ विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतोबाहुरुत विश्वतस्पात्। सम्बाहुभ्यां धमति संपतत्रैर्द्यावाभूमी जनयन् देव एकः ॥ ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् ॥ नानासुगन्धिपुष्पाणि यथाकालोद्भवानि च। पुष्पाञ्जलिं मया दत्तं गृहाण परमेश्वर ! ॥

॥ ॐ नमः पार्वतीपतये हर ॥

'हर हर महादेव शम्भो काशी विश्वनाथ गङ्गे'

❁ श्रीशिवमहिम्नः स्तोत्रम् ❁

[श्रीशिवमहिम्नः स्तोत्र का काल निर्णय करना कठिन है। गन्धर्वराज श्रीपुष्पदन्त कौन थे, कहाँ रहते थे, इत्यादि प्रश्नों के भी कोई निश्चित उत्तर नहीं मिलते हैं। श्रीमधुसूदन सरस्वतीजी ने अपनी टीका में लिखा है कि कोई गन्धर्वराज किसी राजा के प्रमदोद्यान से नित्य सुन्दर-सुन्दर फूल चुराया करता था। राजा ने चोर पकड़ने के लिये रास्ते में शिवनिर्माल्य डाल दिया जिसके लाँघने से अन्तर्धान होने की शक्ति आदि नष्ट हो जाती है। उस दिन संध्या-रात्रि में गन्धर्वराज शिवनिर्माल्य को अनजाने लाँघ गये और चलच्छक्तिहीन होकर वहीं बैठ गये। ध्यान से अपनी शक्तिहीनता और विकलता का कारण जानकर उन्होंने इस स्तोत्र (महिम्नः स्तोत्र) द्वारा परमकारुणिक भगवान आशुतोष शंकर की स्तुति की। इस अनुपम-स्तवन से भगवान् अत्यन्त सन्तुष्ट हुये और गन्धर्वराज की नष्टशक्ति को पुनः उज्जीवित कर दिया। जिसके बल से गन्धर्वराज पकड़े जाने के पहले ही उस उद्यान से निकल कर अपने राज्य में चले गये। इस अपूर्व स्तोत्र में वेद-वेदान्त का सार मनोहर कवित्वमयी वाणी द्वारा वर्णित होने के कारण सर्वत्र सर्वकाल में इसकी अत्यधिक मान्यता है। इसके अनेक पाठ भेद पाये जाते हैं।]

—०❁०—

श्री गणपति स्तुति

ॐ गजाननं भूतगणादिसेवितं
कपित्थजम्बूफलचारुभक्षणम् ।
उमासुतं शोकविनाशकारकं
नमामि विघ्नेश्वरपादपङ्कजमम् ॥

श्री शिवमहिम्नः स्तोत्रम्

(श्रीपुष्पदन्त उवाच)

हरिः ॐ महिम्नः पारं ते परमविदुषो यद्यसदृशी,
स्तुतिर्ब्रह्मादीनामपि तदवसन्नास्त्वयि गिरः ।
अथावाच्यः सर्वः स्वमतिपरिणामावधि गृणन्,
ममाप्येष स्तोत्रे हर ! निरपवादः परिकरः ॥१॥

* *

अतीतः पन्थानं तव च महिमा वाङ्मनसयो—
रतद्व्यावृत्त्यायं चकितमभिधत्ते श्रुतिरपि ।
स कस्य स्तोतव्यः कतिविधगुणः कस्य विषयः,
पदे त्वर्वाचीने पतति न मनः कस्य न वचः ॥२॥

* *

मधुस्फीता वाचः परमममृत ! निर्मितवत—
स्तव ब्रह्मन् किं वागपि सुरगुरोर्विस्मियपदम् ।

मम त्वेतां वाणीं गुणकथनपुण्येन भवतः,
पुनामीत्यर्थेऽस्मिन् पुरमथन ! बुद्धिर्व्यवसिता ॥३॥

*　　　　*

तवैश्वर्यं यत्तज्जगदुदयरक्षाप्रलयकृत्—
त्रयीवस्तु व्यस्तं तिसृषु गुणभिन्नासु तनुषु ।
अभव्यानामस्मिन् वरद ! रमणीयामरमणीं,
विहन्तुं व्याक्रोशीं विदधत इहैके जड़धियः ॥४॥

*　　　　*

किमीहः किंकायः स खलु किमुपायस्त्रिभुवनं,
किमाधारो धाता सृजति किमुपादान इति च ।
अतर्क्यैश्वर्ये त्वय्यनवसर ! दुस्थो हतधियः,
कुतर्कोऽयं कांश्चिन्न मुखरयति मोहाय जगतः ॥५॥

*　　　　*

अजन्मानो लोकाः किमवयववन्तोऽपि जगता—
मधिष्ठातारं किं भवविधिरनादृत्य भवति ।
अनीशो वा कुर्याद् भुवनजनने कः परिकरो
यतो मन्दास्त्वां प्रत्यमरवर ! संशेरत इमे ॥६॥

*　　　　*

त्रयी सांख्यं योगः पशुपतिमतं वैष्णवमिति,
प्रभिन्ने प्रस्थाने परमिदमदः पथ्यमिति च ।
रुचीनां वैचित्र्याद् ऋजुकुटिलनानापथजुषां,
नृणामेको गम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इव ॥७॥

महोक्षः खट्वाङ्गं परशुरजिनं भस्मफणिनः,
कपालं चेतीयत्तव वरद ! तन्त्रोपकरणम् ।
सुरास्तां तामृद्धिं विदधति भवद्भ्रूप्रणिहितां,
न हि स्वात्मारामं विषयमृगतृष्णा भ्रमयति ॥८॥

*　　　　*

ध्रुवं कश्चित्सर्वं सकलमपरस्त्वध्रुवमिदं,
परो ध्रौव्याध्रौव्ये जगति गदति व्यस्तविषये ।
समस्तेऽप्येतस्मिन् पुरमथन ! तैर्विस्मित इव
स्तुवञ्जिह्वेमि त्वां न खलु ननु धृष्टा मुखरता ॥९॥

*　　　　*

तवैश्वर्यं यत्नाद्यदुपरि विरिञ्चिर्हरिरधः,
परिच्छेत्तुं यातावनलमनलस्कन्धवपुषः ।
ततो भक्तिश्रद्धाभरगुरुगृणद्भ्यां गिरिश ! यत् ,
स्वयं तस्थे ताभ्यां तव किमनुवृत्तिर्न फलति ? ॥१०॥

*　　　　*

अयत्नादापाद्य त्रिभुवनमवैरव्यतिकरं,
दशास्यो यद् बाहूनभृत रणकण्डूपरवशान् ।
शिरःपद्मश्रेणीरचितचरणम्भोरुहबलेः,
स्थिरायास्त्वद्भक्तेस्त्रिपुरहर ! विस्फूर्जितमिदम् ॥११॥

*　　　　*

अमुष्यत्वत्सेवासमधिगतसारं भुजवनं,
बलात् कैलासेऽपि त्वदधिवसतौ विक्रमयतः ।

अलभ्या पातालेऽप्यलसचलिताङ्गुष्ठशिरसि,
प्रतिष्ठा त्वय्यासीद् ध्रुवमुपचितो मुह्यति खलः ॥१२॥

* *

यदृद्धिं सुत्राम्णो वरद ! परमोच्चैरपि सती-
मधश्चक्रे बाणः परिजनविधेयस्त्रिभुवनः ।
न तच्चित्रं तस्मिन् वरिवसितरि त्वच्चरणयो—
र्न कस्या उन्नत्यै भवति शिरसस्त्वय्यवनतिः ॥१३॥

* *

अकाण्ड-ब्रह्माण्ड-क्षयचकितदेवासुरकृपा—
विधेयस्यासीद्यस्त्रिनयन ! विषं संहृतवतः ।
स कल्माषः कण्ठे तव न कुरुते न श्रियमहो,
विकारोऽपि श्लाघ्यो भुवनभयभङ्गव्यसनिनः ॥१४॥

* *

असिद्धार्था नैव क्वचिदपि सदेवासुरनरे,
निवर्तन्ते नित्यं जगति जयिनो यस्य विशिखाः
स पश्यन्नीश ! त्वामितरसुरसाधारणमभूत् ,
स्मरः स्मर्तव्यात्मा नहि वशिषु पथ्यः परिभवः ॥१५॥

* *

महीपादाघाताद् व्रजति सहसा संशयपदं,
पदं विष्णोर्भ्राम्यद् भुजपरिघरुग्णग्रहगणम् ।
मुहुर्द्यौर्दौस्थ्यं यात्यनिभृत जटाताडिततटा
जगद्रक्षायै त्वं नटसि ननु वामैव विभुता ॥१६॥

वियद्व्यापी तारागणगुणितफेनोद्गमरुचिः,
प्रवाहो वारां यः पृषतलघुदृष्टः शिरसि ते ।
जगद्द्वीपाकारं जलधिवलयं तेन कृतमि—
त्यनेनैवोन्नेयं धृतमहिम ! दिव्यं तव वपुः ॥१७॥

* *

रथः क्षोणी यन्ता शतधृतिरगेन्द्रो धनुरथो,
रथाङ्गे चन्द्रार्कौ रथचरणपाणिः शर इति ।
दिधक्षोस्ते कोऽयं त्रिपुरतृणमाडम्बरविधि—
र्विधेयैः क्रीडन्त्यो न खलु परतन्त्रा प्रभुधियः ॥१८॥

* *

हरिस्ते साहस्रं कमलबलिमाधाय पदयो—
र्यदेकोने तस्मिन् निजमुदहरन्नेत्रकमलम् ।
गतो भक्त्युद्रेकः परिणतिमसौ चक्रवपुषा,
त्रयाणां रक्षायै त्रिपुरहर ! जागर्ति जगताम् ॥१९॥

* *

क्रतौ सुप्ते जाग्रत्त्वमसि फलयोगे क्रतुमतां,
क्व कर्म प्रध्वस्तं फलति पुरुषाराधनमृते ।
अतस्त्वां संप्रेक्ष्य क्रतुषु फलदानप्रतिभुवं,
श्रुतौ श्रद्धां बद्ध्वा दृढपरिकरः कर्मसु जनः ॥२०॥

* *

क्रियादक्षो दक्षः क्रतुपतिरधीशस्तनुभृता—
मृषीणामार्त्विज्यं शरणद ! सदस्याः सुरगणाः ।

क्रतुभ्रंशस्त्वत्तः क्रतुफलविधानव्यसनिनो,
ध्रुवं कर्तुः श्रद्धाविधुरमभिचाराय हि मखाः ॥२१॥

* *

प्रजानाथं नाथ ! प्रसभमभिकं स्वां दुहितरं
गतं रोहिद्भूतां रिरमयिषुमृष्यस्य वपुषा ।
धनुष्पाणेर्यातं दिवमपि सपत्रा कृतममुं,
त्रसन्तं तेऽद्यापि त्यजति न मृग-व्याधरभसः ॥२२॥

* *

स्वलावण्याशंसा धृतधनुषमह्नाय तृणवत्,
पुरः प्लुष्टं दृष्ट्वा पुरमथन ! पुष्पायुधमपि ।
यदि स्त्रैणं देवी यमनिरत ! देहार्धघटना—
दवैति त्वामद्धा बत वरद ! मुग्धा युवतयः ॥२३॥

* *

श्मशानेष्वाक्रीडा स्मरहर ! पिशाचाः सहचरा—
श्चिताभस्मालेपः स्रगपि नृकरोटीपरिकरः ।
अमङ्गल्यं शीलं तव भवतु नामैवमखिलं,
तथापि स्मर्तॄणां वरद ! परमं मङ्गलमसि ॥२४॥

* *

मनः प्रत्यक्चित्ते सविधमवधायात्तमरुतः,
प्रहृष्यद्रोमाणः प्रमदसलिलोत्सङ्गितदृशः ।
यदालोक्याह्लादं ह्रद इव निमज्ज्यामृतमये,
दधत्यन्तस्तत्त्वं किमपि यमिनस्तत्किल भवान् ॥२५॥

त्वमर्कस्त्वं सोमस्त्वमसि पवनस्त्वं हुतवहु—
स्त्वमापस्त्वं व्योम त्वमु धरणिरात्मा त्वमिति च।
परिच्छिन्नामेवं त्वयि परिणतां बिभ्रतु गिरं,
न विद्मस्तत्तत्वं वयमिह तु यत्त्वं न भवसि ॥२६॥

* *

त्रयीं तिस्रो वृत्तीस्त्रिभुवनमथो त्रीनपि सुरान्—
अकाराद्यैर्वर्णैस्त्रिभिरभिदधत्तीर्णविकृतिः।
तुरीयं ते धाम ध्वनिभिरवरुन्धानमणुभिः,
समस्तव्यस्तं त्वां शरणद! गृणात्योमिति पदम् ॥२७॥

* *

भवः शर्वो रुद्रः पशुपतिरथोग्रः सह महाँ—
स्तथा भीमेशानाविति यदभिधानाष्टकमिदम्।
अमुष्मिन्प्रत्येकं प्रविचरति देव! श्रुतिरपि,
प्रियायास्मै धाम्ने प्रणिहितनमस्योऽस्मि भवते ॥२८॥

* *

नमो नेदिष्ठाय प्रियदव! दविष्ठाय च नमो,
नमः क्षोदि॒ाय स्मरहर! महिष्ठाय च नमः।
नमो वर्षिष्ठाय त्रिनयन! यविष्ठाय च नमो,
नमः सर्वस्मै ते तदिदमिति सर्वाय च नमः ॥२९॥

* *

बहुलरजसे विश्वोत्पत्तौ भवाय नमो नमः,
प्रबलतमसे तत्संहारे हराय नमो नमः।

जनसुखकृते सत्त्वोद्रिक्तौ मृडाय नमो नमः,
प्रमहसि पदे निस्त्रैगुण्ये शिवाय नमो नमः ॥३०॥

*　　　　*

कृशपरिणतिचेतः क्लेशवश्यं क्व चेदं,
क्व च तव गुणसीमोल्लङ्घिनी शश्वदृद्धिः ।
इति चकितममन्दीकृत्य मां भक्तिराधाद्,
वरद ! चरणयोस्ते वाक्यपुष्पोपहारम् ॥३१॥

*　　　　*

असितगिरिसमं स्यात् कज्जलं सिन्धुपात्रे,
सुरतरुवरशाखा लेखनी पत्रमुर्वी ।
लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वकालं,
तदपि तव गुणानामीश पारं न याति ॥३२॥

*　　　　*

असुरसुरमुनीन्द्रैरर्चितस्येन्दुमौले–
र्ग्रथितगुणमहिम्नो निर्गुणस्येश्वरस्य ।
सकलगुणवरिष्ठः पुष्पदन्ताभिधानो,
रुचिरमलघुवृत्तैः स्तोत्रमेतच्चकार ॥३३॥

*　　　　*

अहरहरनवद्यं धूर्जटेः स्तोत्रमेतत्,
पठति परमभक्त्या शुद्धचित्तः पुमान् यः ।
स भवति शिवलोके रुद्रतुल्यस्तथाऽत्र,
प्रचुरतरधनायुः पुत्रवान् कीर्तिमांश्च ॥३४॥

दीक्षा दानं तपस्तीर्थं ज्ञानं यागादिकाः क्रियाः ।
महिम्नस्तवपाठस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम् ॥३५॥

* *

आसमाप्तमिदं स्तोत्रं सर्वमीश्वरवर्णनम् ।
अनौपम्यं मनोहारि पुण्यं गन्धर्वभाषितम् ॥३६॥

* *

महेशान्नापरो देवो महिम्नो नापरा स्तुतिः ।
अघोरान्नापरो मन्त्रो नास्ति तत्त्वं गुरोः परम् ॥३७॥

* *

कुसुमदशननामा सर्वगन्धर्वराजः,
शिशुशशधरमौलेर्देवदेवस्य दासः ।
स खलु निजमहिम्नो भ्रष्ट एवास्य रोषात्,
स्तवनमिदमकार्षीद् दिव्यदिव्यं महिम्नः ॥३८॥

* *

सुरवरमुनिपूज्यं स्वर्गमोक्षैक हेतुं,
पठति यदि मनुष्यः प्राञ्जलिर्नान्यचेताः ।
व्रजति शिवसमीपं किन्नरैः स्तूयमानः,
स्तवनमिदममोघं पुष्पदन्तप्रणीतम् ॥३९॥

* *

श्रीपुष्पदन्तमुखपङ्कजनिर्गतेन
स्तोत्रेण किल्विषहरेण हरप्रियेण ।
कण्ठस्थितेन पठितेन समाहितेन,
सुप्रीणितो भवति भूतपतिर्महेशः ॥४०॥

इत्येषा वाङ्मयीपूजा श्रीमच्छङ्करपादयोः ।
अर्पिता तेन देवेशः प्रीयतां मे सदाशिवः ॥४१॥

* *

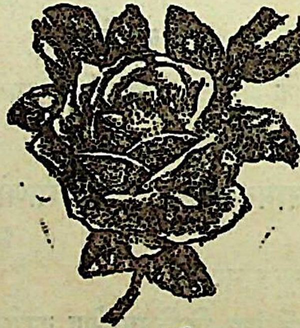
यदक्षरं पदं भ्रष्टं मात्राहीनं च यद्भवेत् ।
तत् सर्वं क्षम्यतां देव ! प्रसीद परमेश्वर ! ॥४२॥

* *

हरिः ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥

* *

॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥



श्रीशिव-पञ्चाक्षर-स्तोत्रम्

[जगद्गुरु आदि शंकराचार्य विरचित इस मधुर स्तोत्र के भी अनेक पाठ भेद पाये जाते हैं।]

ॐ नागेन्द्रहाराय त्रिलोचनाय भस्माङ्गरागाय महेश्वराय।
देवादिदेवाय दिगम्बराय तस्मै 'न'काराय नमः शिवाय॥

मातङ्गचर्माम्बरभूषणाय समस्तगीर्वाणगणार्चिताय।
त्रैलोक्यनाथाय पुरान्तकाय तस्मै 'म'काराय नमः शिवाय॥

शिवामुखाम्भोजविकाशनाय दक्षस्य यज्ञस्य विनाशनाय।
चन्द्रार्कवैश्वानर लोचनाय तस्मै 'शि'काराय नमः शिवाय॥

वशिष्ठकुम्भोद्भवगौतमादि - मुनीन्द्रवन्द्याय गिरीश्वराय।
श्रीनीलकण्ठाय वृषभध्वजाय तस्मै 'व'काराय नमः शिवाय॥

यज्ञस्वरूपाय जटाधराय पिनाकहस्ताय सनातनाय।
नित्याय शुद्धाय निरंजनाय तस्मै 'य'काराय नमः शिवाय॥

पञ्चाक्षरमिदं स्तोत्रं यः पठेत् शिवसन्निधौ।
शिवलोकमवाप्नोति शिवेन सह मोदते॥

—०❀०—

श्रीकाशी-प्रयागराज-प्रणाम

विश्वेशं माधवं तुण्डीं दण्डपाणिं च भैरवम् ।
वन्दे काशीगुहां गङ्गां भवानीं मणिकर्णिकाम् ॥

त्रिवेणीं माधवं सोमं भारद्वाजं च वासुकीम् ।
वन्देऽक्षयवटं शेषं प्रयागं तीर्थनायकम् ॥

* *

ॐ

महादेव ! शिव ! शंकर ! शम्भो ! उमाकान्त ! हर ! त्रिपुरारे ! ।
मृत्युञ्जय ! वृषभध्वज ! शूलिन ! गङ्गाधर ! मृडमदनारे ! ॥
हर ! शिवशंकर ! गौरीशं वन्दे गङ्गाधरमीशम् ।
रुद्रं पशुपतिमीशानं कलये काशीपुरीनाथम् ॥
जय शम्भो ! जय शम्भो ! शिव ! गौरीशंकर ! जय शम्भो ! ।
जय शम्भो ! जय शम्भो ! शिव ! गौरीशंकर ! जय शम्भो ! ॥

[सम्पूर्ण भजन की तीन बार आवृत्ति—शेष बार 'जय शम्भो' कहते समय करतल-ध्वनि एवं 'ॐ नमः पार्वतीपतये हर' कहकर समाप्ति]

* * *

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे ।
हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे ॥

(दो बार आवृत्ति)

श्रीकृष्ण गोविन्द हरे मुरारे, हे नाथ नारायण वासुदेव

(दो बार आवृत्ति)

रघुपति राघव राजाराम, पतितपावन सीताराम

(दो बार आवृत्ति)

श्रीमन्नारायण-नारायण-नारायण

(दो बार आवृत्ति)

ॐ नमो नारायणाय नमो नारायण नमो नारायणाय नमोऽस्तुते

(दो बार आवृत्ति)

जय मदनान्तक मृडमदनारे (दो बार आवृत्ति)

गौरीपति जय शम्भो महादेव (दो बार आवृत्ति)

साम्बसदाशिव साम्बसदाशिव साम्बसदाशिव जय शङ्कर ।

(दो बार आवृत्ति)

हर हर शङ्कर दुःखहर शङ्कर (दो बार आवृत्ति)

सुखकर भयहर हर शङ्कर (दो बार आवृत्ति)

चन्द्रशेखर चन्द्रशेखर चन्द्रशेखर पाहि माम् ।

चन्द्रशेखर चन्द्रशेखर चन्द्रशेखर रक्ष माम् ॥

(दो बार आवृत्ति)

अच्युतं केशवं रामनारायणम्,

कृष्णदामोदरं वासुदेवं हरिम् ।

श्रीधरं माधवं गोपिकावल्लभम्,

जानकीनायकं रामचन्द्रं भजे ॥

(तीन बार आवृत्ति—शेष बार करतलध्वनि एवं ॐ नमः पार्वतीपतये हर कहकर समाप्ति)

मध्याह्न-भोजनकाले श्रीमद्भगवद्गीतायाः
पञ्चदशोऽध्यायः पठितव्यः

—०:॥:०—

ॐ ऊर्ध्वमूलमधः शाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम् ।
छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित् ॥१॥
अधश्चोर्ध्वं प्रसृतास्तस्य शाखा गुणप्रवृद्धा विषयप्रवालाः ।
अधश्च मूलान्यनुसंततानि कर्मानुबन्धीनि मनुष्यलोके ॥२॥
न रूपमस्येह तथोपलभ्यते नान्तो न चादिर्न च संप्रतिष्ठा ।
अश्वत्थमेनं सुविरूढमूलमसङ्गशस्त्रेण दृढेन छित्त्वा ॥३॥
ततः पदं तत्परिमार्गितव्यं यस्मिन्गता न निवर्तन्ति भूयः ।
तमेव चाद्यं पुरुषं प्रपद्ये यतः प्रवृत्तिः प्रसृता पुराणी ॥४॥
निर्मानमोहा जितसङ्गदोषा अध्यात्मनित्या विनिवृत्तकामाः ।
द्वन्द्वैर्विमुक्ताः सुखदुःखसंज्ञैर्गच्छन्त्यमूढाः पदमव्ययं तत् ॥५॥
न तद्भासयते सूर्यो न शशाङ्को न पावकः ।
यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम ॥६॥
ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः ।
मनः षष्ठानीन्द्रियाणि प्रकृतिस्थानि कर्षति ॥७॥
शरीरं यदवाप्नोति यच्चाप्युत्क्रामतीश्वरः ।
गृहीत्वैतानि संयाति वायुर्गन्धानिवाशयात् ॥८॥

श्रोत्रं चक्षुः स्पर्शनं च रसनं घ्राणमेव च ।
अधिष्ठाय मनश्चायं विषयानुपसेवते ॥९॥

उत्क्रामन्तं स्थितं वापि भुञ्जानं वा गुणान्वितम् ।
विमूढा नानुपश्यन्ति पश्यन्ति ज्ञानचक्षुषः ॥१०॥

यतन्तो योगिनश्चैनं पश्यन्त्यात्मन्यवस्थितम् ।
यतन्तोऽप्यकृतात्मानो नैनं पश्यन्त्यचेतसः ॥११॥

यदादित्यगतं तेजो जगद्भासयतेऽखिलम् ।
यच्चन्द्रमसि यच्चाग्नौ तत्तेजो विद्धि मामकम् ॥१२॥

गामाविश्य च भूतानि धारयाम्यहमोजसा ।
पुष्णामि चौषधीः सर्वाः सोमो भूत्वा रसात्मकः ॥१३॥

अहं वैश्वानरो भूत्वा प्राणिनां देहमाश्रितः ।
प्राणापनसमायुक्तः पचाम्यन्नं चतुर्विधम् ॥१४॥

सर्वस्य चाहं हृदि संनिविष्टो
मत्तः स्मृतिर्ज्ञानमपोहनं च ।
वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यो
वेदान्तकृद्वेदविदेव चाहम् ॥१५॥

द्वाविमौ पुरुषौ लोके क्षरश्चाक्षर एव च ।
क्षरः सर्वाणि भूतानि कूटस्थोऽक्षर उच्यते ॥१६॥

उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः ।
यो लोकत्रयमाविश्य बिभर्त्यव्यय ईश्वरः ॥१७॥

यस्मात् क्षरमतीतोऽहमक्षरादपि चोत्तमः ।
अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरुषोत्तमः ॥१८॥

यो मामेवमसंमूढो जानाति पुरुषोत्तमम् ।
स सर्वविद्भजति मां सर्वभावेन भारत ! ॥१९॥

इति गुह्यतमं शास्त्रमिदमुक्तं मयानघ ।
एतद् बुद्ध्वा बुद्धिमान्स्यात्कृतकृत्यश्च भारत ॥२०॥

हरिः ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥

॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

(सबको सब परसा जाने के बाद 'ॐ नमः पार्वतीपतये हर' कहकर भोजन प्रारम्भ करने की रीति है।)

—०:॥:०—

श्रीशङ्कराचार्य-कृत—'गङ्गाष्टकम्'

भगवति ! तव तीरे नीरमात्राशनोऽहं,
विगतविषयतृष्णः कृष्णमाराधयामि ।
सकलकलुषभङ्गे ! स्वर्गसोपानसंगे !
तरलतरङ्गे ! देवि ! गङ्गे ! प्रसीद ॥१॥

भगवति ! भवलीलामौलिमाले ! तवाम्भः-
कणमणुपरिमाणं प्राणिनो ये स्पृशन्ति ।
अमरनगरनारीचामरग्राहिणीनां,
विगतकलिकलङ्कातङ्कमङ्के लुठन्ति ॥२॥

ब्रह्माण्डं खण्डयन्ती हरशिरसि जटावल्लिमुल्लासयन्ती,
स्वर्लोकादापतन्ती कनकगिरिगुहागण्डशैलात्स्खलन्ती ।
क्षोणीपृष्ठे लुण्ठन्ती दुरितचयचमूर्निर्भरं भर्त्सयन्ती,
पाथोधिं पूरयन्ती सुरनगरसरित्पावनी नः पुनातु ॥३॥

मज्जन्मातङ्गकुम्भच्युतमदमदिरामोदमत्तालिजालं,
स्नानैः सिद्धाङ्गनानां कुचयुगविगलत्कुङ्कुमासङ्गपिङ्गम् ।
सायम्प्रातर्मुनीनां कुशकुसुमचयैश्छन्नतीरस्थनीरं,
पायान्नो गाङ्गमम्भः करिकलभकराक्रान्तरंहस्तरङ्गम् ॥४॥

आदावादिपितामहस्य निगमव्यापारपात्रे जलम्,
पश्चात्पन्नगशायिनो भगवतः पादोदकं पावनम् ।
भूयः शम्भुजटाविभूषणमणिर्जह्नोर्महर्षेरियं,
कन्या कल्मषनाशिनी भगवती भागीरथी दृश्यते ॥५॥

शैलेन्द्रादवतारिणी निजजले मज्जज्जनोत्तारिणी,
पारावारविहारिणी भवभयश्रेणीसमुत्सारिणी ।
शेषाहेरनुकारिणी हरिशिरोवल्ली दलाकारिणी,
काशीप्रान्तविहारिणी विजयते गङ्गा मनोहारिणी ॥६॥

कुतोऽवीचिर्वीचिस्तव यदिगता लोचनपथं,
त्वमापीता पीताम्बरपुरनिवासं वितरसि ।
त्वदुत्सङ्गे गङ्गे ! पतति यदि कायस्तनुभृतां,
तदा मातः शातक्रतवपदलाभोऽप्यतिलघुः ॥७॥

गङ्गे ! त्रैलोक्यसारे सकलसुरवधूधौतविस्तीर्णतोये,
पूर्णब्रह्मस्वरूपे हरिचरणरजोहारिणि स्वर्गमार्गे ।
प्रायश्चित्तं यदि स्यात्तव जलकणिका ब्रह्महत्यादिपापे,
कस्त्वां स्तोतुं समर्थस्त्रिजगदघहरे देवि गङ्गे प्रसीद ॥८॥

मातर्जाह्नवि ! शम्भुसङ्गवलिते मौलौ निधायाञ्जलिं-
त्वत्तीरेवपुषोऽवसानसमये नारायणाङ्घ्रिद्वयम् ।
सानन्दं स्मरतो भविष्यति मम प्राणप्रयाणोत्सवो-
भूयाद्भक्तिरविच्युता हरिहराद्वैतात्मिका शाश्वती ॥९॥

गङ्गाष्टकमिदं पुण्यं यः पठेत्प्रयतो नरः ।
सर्वपापविनिर्मुक्तो विष्णुलोकं स गच्छति ॥१०॥

इतिश्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य-
श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं गङ्गाष्टकस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

❀ श्री गुरवे नमः ❀

श्रीमज्जगद्गुरुभगवत्पादाद्यशङ्कराचार्यविरचितस्तोत्रम् ।

प्रातः स्मरणम्

—०:❀:०—

प्रातः स्मरामि हृदि संस्फुरदात्मतत्त्वं,
सच्चित्सुखं परमहंसगतिं तुरीयम् ।
यत्स्वप्नजागरसुषुप्तमवैति नित्यं,
तद्ब्रह्म निष्कलमहं न च भूतसङ्घः ॥ १ ॥
प्रातर्भजामि मनसां वचसामगम्यं,
वाचो विभान्ति निखिला यदनुग्रहेण ।
यन्नेति नेति वचनैर्निगमा अवोचु,
स्तं देवदेवमजमच्युतमाहुरग्र्यम् ॥ २ ॥
प्रातर्नमामि तमसः परमर्कवर्णं,
पूर्णं सनातनपदं पुरुषोत्तमाख्यम् ।
यस्मिन्निदं जगदशेषमशेषमूर्त्तौ,
रज्ज्वां भुजङ्गम इव प्रतिभासितं वै ॥ ३॥

———

श्रीशङ्करदेशिकाष्टकस्तोत्रम् (तोटकवृत्तम्)

विदिताखिलशास्त्रसुधाजलधे, महितोपनिषत्कथितार्थनिधे ।
हृदये कलये विमलं चरणं, भव शङ्करदेशिक ! मे शरणम् ॥
करुणावरुणालय ! पालय मां, भवसागरदुःखविदूनहृदम् ।
रचयाखिलदर्शनतत्त्वविदं, भव शङ्करदेशिक ! मे शरणम् ॥
भवता जनता सुहिता भविता, निजबोधविचारणचारुमते ।
कलयेश्वर जीवविवेकविदम्, भव शङ्करदेशिक ! मे शरणम् ॥
भव एव भवानिति मे नितरां, समजायत चेतसि कौतुकिता ।
मम वारय मोहमहाजलधिम्, भव शङ्करदेशिक ! मे शरणम् ॥
सुकृतेऽधिकृते बहुधा भवतो–भविता पददर्शनलालसता ।
अतिदीनमिमं परिपालय मां, भव शङ्करदेशिक ! मे शरणम् ॥
जगतीमवितुं कलिताऽऽकृतयो–विचरन्ति महामहसश्छलतः ।
अहिमांशुरिवात्र विभासि पुरो-भव शङ्करदेशिक ! मे शरणम् ॥
गुरुपुङ्गव ! पुङ्गवकेतन ते, समतामयतां न हि कोऽपि सुधीः ।
शरणागतवत्सल ! तत्त्वनिधे ! भव शङ्करदेशिक ! मे शरणम् ॥
विहिता न मया विशदैककला, न च किञ्चनकाञ्चनमस्ति गुरो ।
द्रुतमेव विधेहि कृपां सहजां, भव शङ्करदेशिक ! मे शरणम् ॥

इति श्रीमत्प० प० श्रीमत्तोटकाचार्यविरचितं श्रीशङ्कर-
देशिकाष्टकस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

———

त्रिवेणीदशकस्तोत्रम् ।

मुक्तामयालंकृतमुद्रवेणी भक्ताभयत्राणसुबद्धवेणी ।
मत्तालिगुञ्जन्मकरन्दवेणी श्रीमत्प्रयागे जयति त्रिवेणी ॥ १ ॥

लोकत्रयैश्वर्यनिदानवेणी तापत्रयोच्चाटनबद्धवेणी ।
धर्मार्थकामाकलनैकश्रेणी श्रीमत्प्रयागे जयति त्रिवेणी ॥ २ ॥

मुक्तांगनामोहनसिद्धवेणी भक्तान्तरानन्दसुबोधवेणी ।
वृत्त्यन्तरोद्वेगविवेकवेणी श्रीमत्प्रयागे जयति त्रिवेणी ॥ ३ ॥

दुग्धोदधिस्फूर्जसुभद्रवेणी नीलाभ्रशोभाललिता च वेणी ।
स्वर्णप्रभाभासुरमध्यवेणी श्रीमत्प्रयागे जयति त्रिवेणी ॥ ४ ॥

विश्वेश्वरोत्तुङ्गकपर्दिवेणी विरिञ्चिविष्णुप्रणतैकवेणी ।
त्रयीपुराणासुर-सार्धवेणी श्रीमत्प्रयागे जयति त्रिवेणी ॥ ५ ॥

माङ्गल्यसंपत्तिसमृद्धवेणी मात्रान्तरन्यस्तनिदानवेणी ।
परम्परापातकहारिवेणी श्रीमत्प्रयागे जयति त्रिवेणी ॥ ६ ॥

निमज्जदुन्मज्जमनुष्यवेणी जयोदयां भाग्यविवेकवेणी ।
विमुक्तिजन्माविभवैकवेणी श्रीमसत्प्रयागे जयत त्रिवेणी ॥ ७ ॥

सौन्दर्यवेणी सुरसार्धवेणी माधुर्यवेणी महनीयवेणी ।
रत्नैकवेणी रमणीयवेणी श्रीमत्प्रयागे जयति त्रिवेणी ॥ ८ ॥

सारस्वताकारविधातृवेणी कलिन्दकन्यामयलक्ष्यवेणी ।
भागीरथीरूपमहेशवेणी श्रीमत्प्रयागे जयति त्रिवेणी ॥ ९ ॥

श्रीमद्भवानीभवनैकवेणी लक्ष्मीसरस्वत्यभिमानवेणी ।
माता त्रिवेणीत्रयीरत्नवेणी श्रीमत्प्रयागे जयति त्रिवेणी ॥१०॥

त्रिवेणीदशकं स्तोत्रं प्रातर्नित्यं पठेन्नरः ।
तस्य वेणी प्रसन्ना स्याद्विष्णुलोकं स गच्छति ॥११॥

इति श्रीमत् प० प० श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं त्रिवेणीदशकस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

—०❀०—

गीताधर्मप्रेस, मिश्रपोखरा, वाराणसी ।